IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 28, Issue 7, Series 9 (July, 2023) 69-75
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

ग्रामीण बेरोजगारी के स्वरुप एवं प्रकार और उनको दूर करने में पंचवर्षीय योजनाओ की भूमिका

डा.सुप्रिया पांडेय
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
आचार्य नरेंद्र देव नगर निगम महिला महाविद्यालय, हर्ष नगर ,कानपुर

सोध सारांश : *ग्रामीण बेरोजगारी दूर करने व ग्रामीण विकास के लिए सरकार द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाये जा रहे है, जिसमें ऋण अनुदान के अलावा विपणन की सुविधाए भी उपलब्ध है। अनेक बैंक भी ग्रामीण क्षेत्रों के किसानों को ऋण उपलब्ध करा रहे हैं। कुछ बैंको में तो फसल बीमा योजना तथा किसान क्रेडिट कार्ड जैसी सुविधाए भी शुरू की है। पंचवर्षीय योजना के माध्यम से ग्रामीण बेरोजगारों को रोजगार मिले ऐसी अनेक योजनाए चल रही है। स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना, सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, और काम के बदले अनाज योजना जैसी अनेक महत्वपूर्ण विकास योजना एवं रोजगार सृजन योजना सरकार ने चला रखी है, लेकिन इसकी जानकारी ग्रामीण लोगों को होना बहुत आवश्यक है, अन्यथा इसका लाभ या काम सिर्फ कागजों पर या फिर अधिकारियों को ही मिलेगा।*

कुंजी शब्द– *पंचवर्षीय योजना , बेरोजगारी , कुटीर उद्योग , अर्थव्यवस्था , प्रौद्योगिकी एवं तकनिकी विकाश*

यह सत्य है कि भारतीय अर्थव्यस्था में कृषि एक व्यापक किन्तु पिछड़ा हुआ क्षेत्र है, इस पिछड़ेपन ने गरीबी, बेकारी/बेरोजगारी, जैसी समस्या को जन्म दिया है, जो कि अत्यन्त चिन्ताजनक है। राष्ट्रीय सैंपल सर्वे की 55वीं गणना यह दर्शाती है कि रोजगार सृजन की दर में भारी गिरावट आई है। इस प्रकार दैनिक स्थिति के हिसाब से रोजगार की वृद्धि दर जो 1983–1994 के अवधि में 20.7 प्रतिशत थी, 1994–2000 में गिरकर 1.07 प्रतिशत हो गई। शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में बेरोजगारी की संख्या में वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की दर वर्ष 1993–94 में 5.6 प्रतिशत थी जो बढ़कर 1999–2000 में 7.2 प्रतिशत हो गई है।

चूंकि ग्रामीण बेरोजगारी कार्यक्रम बेरोजगारी को दूर करने लिए बनाये गये हैं, इसलिए इसे समझने से पूर्व हमें बेरोजगारी की अवधारणा, अर्थ, परिभाषा एवं इसके रूप को समझना आवश्यक हो जाता है।

1.1 बेरोजगारी की अवधारणा एवं परिभाषाएँ –

साधारणतः बेरोजगारी का अभिप्राय व्यक्ति को काम करने की इच्छा एवं सामर्थ्य रखते हुए भी उचित वेतन दर पर कार्य नहीं मिल पाता है। दूसरे शब्दों में इसका सम्बन्ध केवल उन्हीं व्यक्तियों से है जो कार्य करने की इच्छा रखते है तथा जो किसी कार्य को करने के लिए शारीरिक एवं मानसिक शक्ति भी रखते है। इसके विपरीत यदि समाज में कुछ व्यक्ति कार्य करने के योग्य न हो अथवा योग्य होते हुए भी काम करने के इच्छुक न हो तो तब ऐसे व्यक्तियों को बेरोजगार नहीं कहा जाएगा, क्योंकि इस स्थिति के लिए समाज दोषी नहीं वरन् वे स्वयं दोषी हैं। इसी आधार पर प्रो. पिगूने कहा है कि ''सामान्य व्यवहार में आने वाले कई शब्दों में 'बेरोजगारी' ऐसा शब्द है जिससे हम सभी परिचित है, लेकिन जिसकी परिशुद्ध परिभाषा देना कठिन है''। प्रो. पिगू के अनुसार ''बेरोजगारी का अर्थ है – मजदूरी–अर्जको के वर्गो में केवल मजदूरी–कार्य से सम्बद्ध काम का अभाव''

प्रो. पिगू के अनुसार ''बेरोजगारी में मजदूरी–अर्जको की सभी कार्यहीनता को सम्मिलित नहीं किया जाता, बल्कि उसके केवल उस भाग को शामिल किया जाता है, जो उनके दृष्टिकोण से तथा उनकी विद्यमान दशाओं में अनैच्छिक होती है इसलिए इसमें उन लोगों की कार्यहीनता को सम्मिलित नहीं किया जाता, जो अतिशय वृद्धावस्था, अशक्त या अस्थायी बीमारी के कारण मजदूरी अर्जित करने वाले कार्य में निश्चित रूप से असमर्थ हो जाते है। इनमें उन लोगों की कार्यहीनता को भी शामिल नहीं किया जाता जो बाध्य होकर नहीं, बल्कि स्वेच्छा से निष्क्रिय बैठे हैं।'

गिलिन के अनुसार – ''बेरोजगारी वह दशा है जिसमें काम करने में सामर्थ्य और उसके लिए इच्छुक तथा अपने और अपने परिवार के लिए जीवन की आवश्यकताओं की व्यवस्था के लिए सामान्यतः अपने उपार्जनों पर निर्भर व्यक्ति लाभप्रद नियोजन प्राप्त करने में असमर्थ होता है।''

फेयर चाइल्ड के अनुसार – ''सामान्य कार्यावधि में सामान्य मजदूरी पर तथा समान कार्य की दशाओं में सामान्य श्रमशक्ति के किसी सदस्य के लाभप्रद कार्य से बलपूर्वक या अनैच्छिक रूप से विलग हो जाने की स्थिति को बेरोजगारी कहते है।''

समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से –बेरोजगारी की परिभाषा इस प्रकार है –''यह सामान्य काबिल एक सदस्य (मानी 15–59 आयु वर्ग का) को सामान्य काल में, सामान्य वेतन पर और उसकी इच्छा के विरूद्ध अवैतनिक कार्य से अलग रखना है।''

भारत के योजना आयोग ने उस व्यक्ति को बेरोजगार कहा है जो एक सप्ताह में एक दिन बगैर काम के रहता है। बेरोजगारी की कई अन्य परिभाषाएँ दी गई, इन सभी परिभाषाओं में तथा वास्तविक स्थितियों के अध्ययन से बेरोजगारी के कई तत्वों का बोध होता है, जिनमें निम्नलिखित महत्वपूर्ण है

1.1.1 काम करने की इच्छा –

बेरोजगारी की स्थिति तभी उत्पन्न होती है, जब कौशल और सामर्थ्य के रहते हुए भी अगर व्यक्ति को काम नहीं प्राप्त होता है ।

1.1.2 काम करने का सामर्थ्य –

अगर किसी व्यक्ति में काम करने की इच्छा तो हो, लेकिन उसमें बीमारी, अशक्ता, बुढ़ापा आदि के कारण काम करने की शक्ति या सामर्थ्य नहीं हो, तो उस स्थिति को भी बेरोजगारी की स्थिति नहीं कहते है। काम करने की इच्छा और सामर्थ्य दोनों के रहते हुए भी काम का नहीं मिलना ही बेरोजगारी है।

1.1.3 मजदूरी के लिए काम –

बेरोजगारी की स्थिति के लिए यह भी आवश्यक है कि काम के लिए इच्छुक और योग्यता रखने वाला व्यक्ति दूसरों के नियोजन में मजदूरी के लिए काम की खोज में हो। व्यापार, अपने व्यवसाय या अन्य प्रकार से धन कमाने के लिए स्वनियोजन की खोज में लगे व्यक्ति को बेरोजगार नहीं कहा जा सकता।

1.1.4 पर्याप्त समय के लिए काम की खोज –

बेरोजगार की स्थिति के लिए यह भी आवश्यक है कि काम खोजने वाले व्यक्ति पर्याप्त समय या अवधि के लिए काम की खोज में हो। साधारणतः केवल अल्प अवधि के लिए अति स्थायी रूप से काम की खोज को बेरोजगारी में सम्मिलित नहीं किया जाता। बेरोजगारी उस अवस्था से उत्पन्न होती है जब व्यक्ति कम या अधिक मात्रा में लंबी अवधि के लिए एवं लगातार काम की खोज में हो।

अतः स्पष्ट है कि बेरोजगारी उस स्थिति को कह सकते है, जब काम करने के इच्छुक एवं उसके लिए समर्थ व्यक्ति को प्रचलित मजदूरी–दर पर तथा प्रचलित मानकों के अनुसार पर्याप्त अवधि के लिए काम नहीं मिल पाता हो।

1.2 भारत में रोजगार एवं विकास –

भारत में रोजगार एवं विकास संबंध का अनुभव विकसित अर्थव्यवस्था की तुलना में भिन्न है। भारत में बेरोजगारी का उल्लेख मुख्य दो शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है।

1) ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी
2) शहरी क्षेत्र में बेरोजगारी

1.2.1 ग्रामीण क्षेत्र में बेरोजगारी अथवा कृषि क्षेत्र की बेरोजगारी –

भारत एक कृषि प्रधान देश है। जहाँ अधिकांश जनसंख्या अपना जीविकोपार्जन कृषि के माध्यम से करती है। जनसंख्या के मामले मे यह विश्व का दूसरा बड़ा राष्ट्र है। लगभग 65 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर रहती है जबकि सम्पूर्ण विश्व के क्षेत्रफल की 2.4 प्रतिशत भूमि यहाँ उपलब्ध है इसमें भी कम भूमि पर कृषि कार्य किया जाता है। भारत की अधिकांश जनसंख्या भूमिहीन तथा बेरोजगार है, कुछ जनसंख्या तो आज भी बंधुआ मजदूर के रूप में कार्य करते है।

हमारे देश के ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या ही कार्यशील है शेष किसी न किसी रूप में इन्हीं कार्यशील जनसंख्या पर आश्रित है। इस प्रकार कमाने वाला एक व्यक्ति और खाने वाले व्यक्तियों की संख्या 10 हैं। एक सर्वेक्षण के उपरान्त विभिन्न राज्यों में बंधुआ मजदूरों की संख्या 1,20,000 बताई गयी थी।

इसी प्रकार से सर्वेक्षण में बताया गया है कि देश में सीमान्त किसान की संख्या लगभग 3 करोड़ है और खेतिहर मजदूरों, सीमान्त किसान और छोटे किसान मिलकर कुल ग्रामीण परिवारों की लगभग 75 प्रतिशत भाग का निर्माण करते है।

ग्रामीण बेरोजगारी की एक समस्या यह है कि उन्हें नियमित रूप से रोजगार नहीं मिल पाता और बेकारी एवं अल्प रोजगार की स्थिति में उन्हें समय व्यतीत करना पड़ता है। इनका समस्त जीवन बेकारी गरीबी शोषण उत्पीड़न और अनिश्चितता से भरा हुआ रहता है। कुछ स्थानों पर खेतिहर मजदूर की दशा गुलामों जैसी होती है तथा भू–स्वामी इनसे बेगार लेता है और बहुत कम मजदूरी देते है। रोजगार की दृष्टि से अस्थायी श्रमिकों की दशा तो बहुत ही दयनीय है। इन्हें वर्ष में 3–6 माह तक बेकार/बेरोजगारी की स्थिति में जीवन व्यतीत करना पड़ता है फलस्वरूप बेरोजगारी और बढ़ जाती है।

''शाही आयोग'' का विचार है कि ''भारतीय कृषक वर्ष भर में कम से कम चार–पाँच महीने अवश्य बेरोजगार रहते है।''कृषि की मौसमी प्रकृति के कारण अपूर्ण अथवा अल्प बेरोजगार की समस्या उत्पन्न हो जाती है। इसके अतिरिक्त भारत में कृषि की पिछड़ी स्थिति भी बेरोजगारी की

समस्या को और अधिक गम्भीर बना देती है। कृषि के क्षेत्र में पायी जाने वाली कृषि सम्बन्धी बेरोजगारी जिसे ग्रामीण बेरोजगारी भी कह सकते है, का सबसे बड़ा कारण कुटीर उद्योग धन्धों का नष्ट हो जाना है।

ग्रामीण क्षेत्र में हमें कृषि में मौसमी एवं छिपी प्रकृति की बेरोजगारी देखने को मिलती है। भारत में 83.34 प्रतिशत (2011 जनगणना के अनुसार) जनसंख्या गाँव में रहती हैं। रोजगार और बेरोजगारी की स्थित पर जनवरी–जून 2004 में किए गए राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा 60वें दौर के सर्वेक्षण के परिणामस्वरूप ग्रामीण व्यक्तियों में से 44 प्रतिशत व्यक्ति श्रमिक थे, ग्रामीण क्षेत्रों में 55 प्रतिशत पुरूष और 32 प्रतिशत महिलाए श्रमिक/मजदूर थी। ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त पुरूषों में से लगभग 66 प्रतिशत और स्त्रियों में से 84 प्रतिशत कृषि क्षेत्र में थी। 1993–94 से 2004 के बीच ग्रामीण क्षेत्रों में पुरूषों की बेरोजगारी दर 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 9 प्रतिशत हो गयी। इसी प्रकार महिलाओं की बेरोजगारी दर 1993–94 में 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 2004 में 9.3 प्रतिशत हो गई।

भारत में गरीबी का आकलन पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा उपयोग न कर पाने की क्षमता के आधार पर किया जाता है। उस व्यक्ति को निर्धनता की रेखा से नीचे माना जाता है, जो ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिदिन 2400 कैलोरी भोजन प्राप्त करने में असमर्थ है। राष्ट्रीय प्रादर्श सर्वेक्षण संगठन (HSSO) के 61वें चक्र के अनुसार वर्ष 2004–05 के दौरान भारत में गरीबी का अनुपात 21.8 प्रतिशत था किन्तु इसकी तुलना वर्ष 1999–2000 के दौरान अंकलित 26.1 प्रतिशत के अनुपात से नहीं की जा सकती, क्योंकि 2004–05 के लिए गरीबी का अनुपात भिन्न वस्तुओं की कीमतों पर आधारित था। अतः यह आँकड़े बतातें है कि 1993–94 से 2007 के बीच बेरोजगारी की दर बढ़ी है। आर. के. मुकर्जी ने ''रूरल इकनोमी आफ इण्डिया'' में कहा है कि उत्तर भारत में एक औसत किसान एक वर्ष में 200 दिन से अधिक व्यस्त नहीं रहता। स्लेटर का ''सम साउथ इण्डियन विलेजेस'' में मानना है कि दक्षिण भारत में किसान एक वर्ष में केवन साढ़े पांच महीने व्यस्त रहते है।

जैक ''इकनोमिक लाइफ आफ ए बंगाल डिस्ट्रिक्ट'' के अनुसार एक वर्ष में जूट श्रमिक नौ महीने और चावल–निर्माता साढ़े सात महीने बेकार रहते है। ऐसा मानना है कि यहाँ पर केवल धान ही मुख्य फसल है जो कि साल भर में दो बार उत्पन्न होता है। धानकी फसल में ज्यादा काम न होने एवं अधिक लोगों की आवश्यकता ज्यादा समय के लिए न पड़नें से परिवार के अन्य लोग बेकारी की स्थिति में हमेशा ही रहते है –इसका तात्पर्य यह है कि यहाँ ऐसे व्यक्ति अधिक है जो वर्ष में 165 दिन बेकार रहते है इसके अतिरिक्त भारतीय ग्रामों में मौसमी, व अदृश्य बेरोजगारी बहुत अधिक पायी जाती है।

1.2.2 ग्रामीण बेरोजगारी के कारण –

ग्रामीण बेरोजगारी के लिए भारत की दृष्टिकोण से जनाधिकता, कृषि योग्य भूमि टुकड़ों में बँट जाना, प्राकृतिक प्रकोप, सिंचाई के साधनों का अभाव, पिछड़ी कृषि व्यवस्था, कुटीर उद्योग का ह्यस, कृषि योग्य भूमि मे फैक्ट्री द्वारा अधिग्रहण, बड़े–बड़े बिल्डरों द्वारा एवं सरकार के सहयोग से कालोनी, अपार्टमेन्ट माल आदि द्वारा अधिग्रहण आदि कारक उत्तरदायी है।

1.3 ग्रामीण बेरोजगारी का स्वरूप –

ग्रामीण बेरोजगारी के स्वरूप को देखने के लिए हमें ग्रामीण जीवन के यथार्थवादी ढाँचे का परीक्षण करना होगा ताकि एक सुदृढ़ एवं उपयोगी रोजगार नीति का निर्माण किया जा सके। हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था अपने आप में विभिन्न समस्याओं से ग्रस्त है।

भारतीय अर्थव्यवस्था के सम्पूर्ण ढाँचे के अनुरूप ग्रामीण क्षेत्र में भी सकारात्मक बेरोजगारी पाई जाती है अर्थात् युवकों को प्रचलित मजदूरी पर कार्य के अवसर नहीं मिल पाते। जनसंख्या वृद्धि दर के अनुरूप कार्य के अवसर उतनी गति से नहीं बढ़ पाने से प्रति वर्ष बेरोजगारी की संख्या में और अधिक वृद्धि होती चली जाती है। फलतः यह समस्या दिन–प्रतिदिन और अधिक जटिल एवं स्थायी होती जा रही है।

(क) अस्वैच्छिक बेरोजगारी –

अस्वैच्छिक बेरोजगारी से तात्पर्य यह है कि जिन व्यक्तियों में काम करने की इच्छा और क्षमता तो होती है, लेकिन उन्हे काम नहीं मिल पाता, और मिलता भी है तो प्रचलित मजदूरी दर से बहुत कम दर पर। सामान्यतः बेरोजगारी को इसी व्यापक रूप में देखा जाता है।

(ख) प्रतिरूद्ध बेरोजगारी –

प्रतिरूद्ध बेरोजगारी से आशय है कि जो रोजगार खोजने वालों तथा रोजगारी के उपलब्ध अवसरों के बीच घर्षण या प्रतिरोध के कारण विशेष प्रकार के श्रमिकों की मांग होती है और उपलब्ध योग्यता वाले मजदूरों को काम नहीं मिल पाता। दूसरे शब्दों में प्रतिरूद्ध बेरोजगारी श्रमिकों की मांग और पूर्ति से संबद्ध तत्वों के बीच प्रतिरोध के कारण उत्पन्न होती है।

(ग) प्रौद्योगिकी बेरोजगारी –

प्रौद्योगिकी या तकनीकि विकास के साथ–साथ उत्पादन प्रक्रियाओं में निरंतर परिवर्तन होते रहते है। नए–नए प्रौद्योगिक अविष्कारो, जैसे – स्वचलित मशीनो एवं इलेक्ट्रॉनिक कम्प्यूटर के प्रयोग से पुरानी प्रक्रियाओं पर कार्यरत् श्रमिक विस्थापित होकर बेरोजगार हो जाते है।

(घ) मौसमी बेरोजगारी –

मौसमी या सामयिक परिवर्तनों के कारण होने वाली बेरोजगारी को मौसमी बेरोजगारी कहते है। उदाहरण :– चीनी उद्योग, गोदी तथा निर्माण कार्यो में लगे श्रमिकों को शिथिल अवधि या मौसम में काम नहीं मिल पाता और वे बेरोजगार हो जाते है।

(ङ) अल्परोजगारी –

अल्परोजगारी ऐसी बेरोजगारी है, जिसमें लोगों को प्रचलित मानकों के अनुसार पूरी अवधि के लिए रोजगार नहीं मिल पाता। उदाहरणार्थ :– अगर किसी व्यक्ति को वर्ष में केवल एक, दो या चार महीने तक ही रोजगार मिल पाता है और शेष अवधि में उसे कोई काम नहीं मिलता, तो उसे अल्प बेरोजगारी की स्थिति कहेंगे।

(च) प्रच्छन्न बेरोजगारी –

भारत में प्रच्छन्न बेरोजगारी की समस्या बहु गंभीर बनी हुई है। देश में बड़ी संख्या में लोग कृषि कार्यो पर नियोजित रहते है, लेकिन उत्पादन से संबद्ध कार्यो में उनके समय का केवल एक ही भाग लग पाता है और शेष समय यों ही व्यर्थ चला जाता है।

(छ) चक्रीय बेरोजगारी –

इसका सम्बंध व्यापार चक्रों से है। व्यापार में उतार–चढ़ाव आते ही रहते हैं। उदाहरण के तौर पर अभी हाल में 2012. के अंत में आर्थिक मंदी आ जाने से लाखों व्यक्ति बेरोजगार हो गये थे यहाँ तक कि बड़ी–बड़ी कम्पनियाँ भी दिवालिया हो गयी।

(ज) संरचनात्मक बेरोजगारी –

जब देश में पूँजी के साधन सीमित होते है और कार्य चाहने वालों की संख्या बराबर बढ़ती जाती है तो कुछ व्यक्ति बिना कार्य के ही रह जाते है, क्योंकि इसके लिए पर्याप्त पूँजी साधन नहीं होते हैं। तो इसे ही संरचनात्मक बेरोजगारी कहते है। उदाहरणार्थ :– अगर विदेशी बाजारों में निर्यात की जाने वाली वस्तुओं की मांग घट जाती है तो उनके उत्पादन में लगे श्रमिकों को बेरोजगार होना पड़ जाता है।

(झ) शिक्षित बेरोजगारी –

शैक्षिक बेरोजगारी इसलिए होती है खासकर भारत जैसे विकासशील देशों में क्योंकि शिक्षा अधिकांशतः जीवन से जुड़ी नहीं होती है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अपने वार्षिक प्रतिवेदन में स्पष्ट कहा है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली बहुत बेकारी और गतिहीनता उत्पन्न कर रही है। शिक्षा प्रणाली अप्रासंगिक है क्योंकि यह उच्च शिक्षा पर बल देती है जिस से कि केवल एक छोटे अल्प वर्ग को ही रोजगार दिया जा सकता है।

(ञ) अस्थायी बेरोजगारी –

शिक्षा या प्रशिक्षण समाप्त होने के बाद जब तक व्यक्ति को कार्य नहीं मिलता है उस समय तक वह बेरोजगार रहता है, किन्तु ज्यों ही उसे काम मिल जाता है वह रोजगार प्राप्त व्यक्ति माना जाता है।

(ट) ऐच्छिक बेरोजगारी –

जब एक व्यक्ति को काम करने की क्षमता होते हुए भी आलस्य, कम मजदूरी या अन्य कारणों से स्वेच्छा से काम नहीं करता है तो उसे ऐच्छिक बेरोजगार माना जाएगा।

(ठ) खुली बेरोजगारी –

खुली बेरोजगारी से तात्पर्य यह है कि जो शिक्षित लोग गाँव से शहर आने पर जब तक शहर में रोजगार नहीं मिलता तब तक खाली पड़े रहते है। इसे ही खुली बेरोजगारी कहते है, तथा इसमें शिक्षित बेरोजगारी को भी सम्मिलित किया जाता है।

1.4 बेरोजगारी मापन की अवधारणाएँ –

बेरोजगारी का मापन करने के लिए तीन प्रमुख अवधारणाओं को समझना आवश्यक है ।

I. सामान्य स्थिति

II. व्यक्ति सप्ताह

III. व्यक्ति दिवस

I. सामान्य स्थिति या चिरकालिक बेरोजगारी–

बेरोजगारी मापन की इस अवधारणा से आशय पूर्व लम्बी समय से चली आ रही बेरोजगारी की दशा से है। बेरोजगारी यह अवधारणा बेरोजगारी का बहुत नीचे स्तर पर माप करती है क्योंकि एक विकासशील देश में लोग बहुत अधिक लम्बी अवधि तक बेरोजगार नहीं रह सकते।

II. व्यक्ति सप्ताह –

व्यक्ति सप्ताह में उन बेरोजगारी की गणना की जाती है जो एक वर्ष के बजाय किसी एक सप्ताह में बेरोजगार हैं। इस अवधारणा में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि यदि गणना के सप्ताह में श्रमिकों को एक दिन भी कार्य मिल जाता है तो वह बेरोजगार नहीं कहलाएगा।

III. व्यक्ति दिवस –

व्यक्ति दिवस में एक सप्ताह के अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को प्रतिदिन (आधा दिन) मिलने वाले कार्य को शामिल किया जाता है। बेरोजगार व्यक्ति–दिवसों की दर को ज्ञात करने के लिए संबंधित सप्ताहों को अंश तथा कुल श्रम–दिवसों की मात्रा को दर माना जाता है। भारतीय

अर्थव्यवस्था के चार क्षेत्रो कृषि, विनिर्माण, व्यापार, होटल एवं रेस्टोरेंट एवं सामुदायिक सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाओं में 86.84 प्रतिशत रोजगार के अवसर उपलब्ध होते हैं।

1.5 बेरोजगारी के मानदण्ड –

एक व्यक्ति बेरोजगार है अथवा अल्प रोजगार है, इसके मुख्य रूप से चार मानदंड बताए गए हैं जो निम्न है –

i. **आय मानदण्ड** –यदि एक व्यक्ति प्रतिवर्ष निर्दिष्ट न्यूनतम आय से कम आय अर्जित करता है।।

ii. **समय मानदण्ड –** यदि एक व्यक्ति एक वर्ष में निर्दिष्ट घण्टों (या दिवसों) के लिए लाभप्रद ढंग से रोजगार में कार्यरत् है जो कुछ सामान्य या आदर्श घण्टों (या दिवसों) जिसे पूर्ण रोजगार के घण्टे (या दिवस) कहा जाता है, से कम समय काम करता है।

iii. **उत्पादित मानदण्ड** –यदि एक मजदूर को उत्पादन में उसका योगदान सामान्य उत्पादकता से कम होने के कारण वर्तमान रोजगार से हटा दिया जाता है, तब भी कुल उत्पादन पूर्ववत बना रहता है।

iv. **इच्छित मानदण्ड** –यदि कोई मजदूर वर्तमान समय में जितना कार्य निर्दिष्ट शर्तो पर करता है, उससे अधिक कार्य करने के लिए तत्पर रहे।

1.6 पंचवर्षीय योजनाओं से ग्रामीण बेरोजगारी दूर करने सम्बन्धी प्रयास –

देश में व्याप्त बेराजगारी को दूर करने के लिए पंचवर्षीय योजना में शुरू से ही प्रयास किए गए है। साधारणतः पहली तीन पंचवर्षीय योजनाओं में रोजगार के अवसरों में वृद्धि के लिए आर्थिक विकास के सामान्य कार्यक्रमों पर जोर दिया गया, लेकिन चौथी योजना के प्रारम्भ से इस संबंध में विशेष कदम उठाए गए थे। योजनाओं के अन्तर्गत बेरोजगारी दूर करने से संबद्ध नीति एवं लक्ष्यों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है 35,36–

1. पहली पंचवर्षीय योजना (1951–55 – 1555–56 ई.) –

पहली पंचवर्षीय में आर्थिक विकास के सामान्य कार्यक्रमों द्वारा ही रोजगार में वृद्धि की आशा की गई, लेकिन बाद में समस्या की गम्भीरता को समझते हुए रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिए अतिरिक्त 300 करोड़ रूपये खर्च करने की व्यवस्था की गई। योजना आयोग ने रोजगार बढ़ाने के लिए कुछ विशेष कार्यक्रम भी रखें, जिसमें लघु उद्योगों और व्यवसायों को सहायता, ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यालय की स्थापना, सड़क–यातायात के विकास तथा भवन निर्माण पर जोर देने का सुझाव दिया गया। योजना की अवधि में लगभग 54 लाख लोगों को रोजगार दिलाया जा सका।

2. दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956–57 – 1960–61 ई.) –

दूसरी पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों में रोजगार के अवसरों के विस्तार को सम्मिलित किया गया। इस उद्योग की कृषि की जगह उद्योगों के विकास पर विशेष जोर दिया गया।

योजना के अन्तर्गत आर्थिक दृष्टि से पिछड़े क्षेत्रों में रोजगार बढ़ाने के लिए विशेष प्रयास किए गए। इस योजनाकाल में लगभग 80 लाख लोगों को रोजगार दिलाया गया, जिनमें 65 लाख लोग ग्रामीण क्षेत्रों के थे।

3. तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–62 – 1965–66 ई.) –

इस पंचवर्षीय में देश के जन–संसाधनों के पूरे उपयोग और रोजगार के अवसरों में वृद्धि के लक्ष्य का स्पष्ट उल्लेख किया गया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए तीन मुख्य दिशाओं के प्रयास करने के निर्णय लिए गए –

i. पहले की तुलना में रोजगार के प्रभावों या लाभों को अधिक व्यापक रूप से वितरित करना।

ii. ग्रामीण विद्युतीकरण, ग्रामीण औद्योगिक बस्तियों एवं ग्रामीण निर्माण कार्यो का विस्तार करना।

iii. मानव शक्ति का प्रभावपूर्ण ढंग से उपयोग करना।

इस तृतीय पंचवर्षीय योजना में लगभग 1.5 करोड़ लोगों को रोजगार दिलाया गया।

4. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–70 – 1973–74 ई.) –

रोजगार के अवसरों में वृद्धि के लिए श्रमप्रधान कार्यक्रमों पर विशेष जोर दिया गया। इनमें कृषि में निवेश, ग्रामीण आधारित संरचना तथा विद्युतीकरण, ग्रामीण उद्योग, यातायात–सम्पर्क तथा ग्रामीण और शहरी आवास मुख्य थे। योजना में रोजगार के अवसरों में वृद्धि के साथ–साथ उच्च स्तर के कौशल पर उत्पादक–नियोजन को महत्वपूर्ण माना गया। इस योजना के दौरान बेरोजगारी–उन्मूलन सम्बंधित कुछ विशेष कार्यक्रम भी चलाए गए। जैसे –

i. ग्रामीण रोजगार शीघ्रलघुदायी योजना।

ii. शिक्षित बेरोजगारों के लिए कार्यक्रम।

iii. विशेष रोजगार कार्यक्रम।

iv. पाँच लाख रोजगार कार्यक्रम।

इस पंचवर्षीय योजनागत केवल 27 लाख लोगों को ही रोजगार मुहैया कराया गया।

5. पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974–75 – 1977–78 ई.) –

पांचवी योजना में बेरोजगारी कम करने के लिए उत्पादक–नियोजन के अवसरों तथा स्वनियोजन में विस्तार को विशेष महत्व दिया गया। इस योजनागत् खेतिहर मजदूरों तथा छोटे और अति लघु किसानों के लिए बड़े स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराने पर विशेष कार्यक्रम चलाए गए।

6. छठी पंचवर्षीय योजना (1980–81 – 1984–85 ई.) –

इस योजना में ग्रामीण असंगठित क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों पर व्यापक वृद्धि का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस योजना में बेरोजगारी उन्मूल से सम्बद्ध पहले से चलाए जाने वाले कई कार्यक्रमों को कुछ परिवर्तनों के साथ चलने दिया गया और साथ ही राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम नाम एक नया और महत्वपूर्ण देशव्यापी कार्यक्रम शुरू किया गया। योजना में बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए समेकित ग्रामीण विकास, दुग्ध उद्योग, मत्स्य पालन, ग्रामीण एवं लघुउद्योग, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, उद्यमी युवकों के प्रशिक्षण, साख ओर विपणन की सुविधाओं आदि आर्थिक क्रियाकलापों के विस्तार पर विशेष जोर दिया गया।

7. सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–86 – 1990–91 ई.) –

इस योजना में ग्रामीण क्षेत्रों से बेरोजगारी कम करने के लिए विशेष महत्व दिया गया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए तीव्र कृषि, सिंचाई–सुविधा, श्रमप्रधान प्रक्रिया, पशुपालन, लघु एवं कुटीर उद्योग, निर्माण एवं आवास, शिक्षा, सड़क निर्माण, जल–आपूर्ति आदि कई क्षेत्रों के तेजी से विस्तार पर जोर दिया गया है। इस समय राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम के माध्यम से बेरोजगारी की मात्रा में व्यापक कमी की आशा की गई थी। 1989 ई. में इन दोनो कार्यक्रमों को एक कार्यक्रम में विलीन कर 'जवाहर रोजगार योजना' नामक एक नया कार्यक्रम शुरू किया गया।

8. आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97 ई.) –

इस पंचवर्षीय योजना में रोजगार के अवसरों (विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में) के सृजन पर ध्यान केन्द्रीत करते हुए केन्द्रीय योजना में ग्रामीण विकास विभाग के लिए 30,000 करोड़ रूपये की धनराशि निर्धारित की गयी। योजना में रोजगार के अवसरों में वृद्धि के लिए ग्रामीण–विकास कार्यक्रमों में सुधार एवं परिवर्तन लाने पर जोर दिया गया था।

9. नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002 ई.) –

इस पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत न्यायपूर्ण विवरण और समानता के साथ विकास आदि मुख्य उद्देश्यो के साथ 6.5 प्रतिशत आर्थिक वृद्धि का प्रावधान था। इस पंचवर्षीय योजना में 8,13,998 करोड़ रू. खर्च का प्रावधान भी था।

10. दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–2007 ई.) –

इस पंचवर्षीय योजना में 15,25,639 करोड़ रू. का बजट रखा गया था तथा पंचवर्षीय योजना उद्देश्य –

i. 5 करोड़ रोजगार के अवसर सृजन करना।

ii. योजना अवधि में श्रमबल में हुई अतिरिक्त वृद्धि को उच्च गुणवत्ता युक्त रोजगार उपलब्ध कराना।

iii. साक्षरता तथा मजदूरी में लिंगानुपात अन्तर को 2007 तक 50 प्रतिशत कम करना।

iv. सकल घरेलू उत्पाद में सालाना 8 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि।

v. निर्धनता अनुपात में सन् 2007 तक 5 प्रतिशत तथा 2012 तक 15 प्रतिशत की कमी लाना।

11. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007–12 ई.) –

ग्याहरवीं पंचवर्षीय का प्रारूप 10वीं पंचवर्षीय योजना के लक्ष्य व प्राप्ति के आधार पर बनाया गया था लेकिन लक्ष्य के विपरीत परिणाम आए जिससे योजना समाप्ति तक लक्ष्य एवं प्राप्ति में अन्तर पाया गया जो कि 11वीं पंचवर्षीय योजना के लिए चुनौती बनकर उभरा है। इनमें से

विशेष जानकारी मिली की ग्रामीण क्षेत्र का पिछड़ापन, बेरोजगारी, गरीबी में बेतहाशा वृद्धि हुई है। इसके अलावा गरीबों के लिए अनिवार्य सार्वजनिक सेवाओं की व्यवस्था, कृषि की गतिशीलता आदि में लक्ष्य से कम प्राप्ति हुई।

1.7 उद्देश्य –

a. गरीबों के लिए अनिवार्य सेवाए जो सार्वजनिक रूप में व्यवस्था करवाना।

b. मानव संसाधनों का विकास करना।

c. पर्यावरण का संरक्षण।

d. पुनर्वास और पुर्नउद्धार पद्धति में सुधार करना।

e. कृषि में गतिशीलता लाना।

1.8 समावेशी विकास –

निर्धनता निवारण, शिक्षा, महिलाओं एवं बच्चों की स्वास्थ्य की स्थिति पर आधारित संरचना व पर्यावरण आदि के मामलों में राष्ट्रीय स्तर पर 27 राज्यों के लिए 13 विभिन्न लक्ष्य योजना में निर्धारित किये गये थे।

योजना के अंतर्गत पूरे समय में ''समावेशी विकास'' पर विशेष ध्यान देना सर्वोच्च प्राथमिक उद्देश्य था, ''समावेशी विकास'' यानि सामाजिक न्याय के साथ विकास।

1.9 समावेशी विकास के महत्वपूर्ण घटक –

i. मूलभूत आवश्यक वस्तुओं तक सभी की पहुंच।

ii. कृषि तथा ग्रामीण विकास सुनिश्चित करना जिसके लिए इस क्षेत्र में निर्धन तथा कमजोर महिलाओ तथा बच्चों का सामाजिक तथा आर्थिक स्वावलम्बी हो।

iii. कमजोर वर्ग के सभी पहलुओं पर (सामाजिक, आर्थिक) प्रभाव कम हो।

iv. अनुसूचित जाति/जनजाति, अल्पसंख्यकों तथा सभी वर्ग के कमजोर महिलाओं, बच्चों का सामाजिक तथा आर्थिक सुदृढ़ करना।

v. शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले सभी बेरोजगारों के लिए सामान्य रूप से तथा अकुशल, कुशल लोगों के लिए रोजगार के सुनिश्चित अवसर उपलब्ध करवाना।

1.10 योजना आयोग का इण्डिया विजन (2020) –

योजना आयोग का इंडिया विजन 2020 एक भारतीय विकास का महत्वपूर्ण दस्तावेजो में से एक है जिसको योजना आयोग ने 23 जनवरी 2003 को जारी किया था। योजना आयोग के सदस्य श्याम प्रसाद गुप्ता की अध्यक्षता में तैयार किये गए 97 पृष्ठों के इस दस्तावेज में आने वाले दो दशकों बाद की वास्तविक स्थिति क्या होगी इसे दर्शाया गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

1 ग्रामीण विकास की समस्याएं एवं उनका समाधान ष्कुरुक्षेत्र वर्ष ५२ अंक ३ ग्रामीण विकास मंत्रालय , नयी दिल्ली

2 गाँधी महात्मा , हिन्द स्वराज , साहित्य मंडल , नयी दिल्ली १९५८

3 शर्मा डा धर्मराज ष भारतीय संघ व्यवस्था के राज्य सम्बन्ध ष रावत प्रकाशन , जयपुर

4 कुरुक्षेत्र

5 योजना